राजस्थान की पारंपरिक जल प्रबंधन प्रणाली एवं वास्तुकला का गौरवः ''तूरजी का झालरा''

मलखान सिंह जाटव
राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान
उत्तर पश्चिमी क्षेत्रीय केंद्र, जोधपुर, राजस्थान

ऐतिहासिक परिदृश्यः

तूरजी का झालरा, 18वीं सदी के जोधपुर शहर की स्थापत्य एवं पारंपरिक जल प्रबंधन प्रणाली की उत्कृष्टता का प्रतीक है। इसे जोधपुर के महाराजा अभय सिंह राठौड़ के शासनकाल के दौरान उनकी महारानी तंवर (तूर रानी) ने वर्ष 1740 में बनवाया था, जिसके कारण इसका नाम तूरजी/तोरजी का झालरा पड़ा। इसे 'तूरजी की बावड़ी' भी कहा जाता है। यह झालरा मरुस्थलीय शहर में लोगों के लिए महत्वपूर्ण जल स्त्रोत होने के साथ–साथ जल संरक्षण की विशेष तकनीक को भी प्रकट करता है, जो उस समय की सामुदायिक सहभागिता, उपयोगिता और अद्वितीय शिल्पकला के अनूठे संगम को प्रदर्शित करता है।

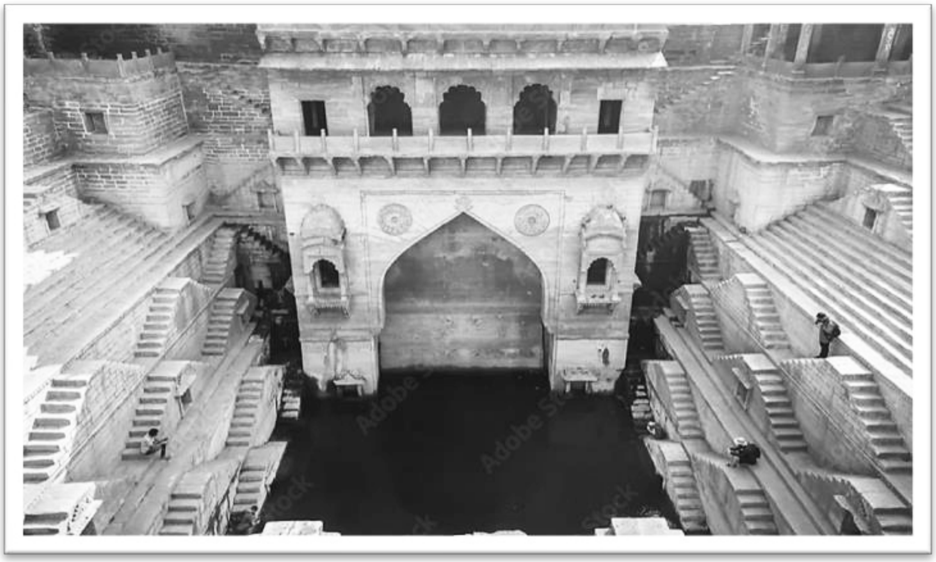

चित्र 1 : स्थापत्य एवं पारंपरिक जल प्रबंधन प्रणाली की उत्कृष्टता को प्रदर्शित करता तूरजी का झालरा

उत्पत्ति और उद्देश्य :

राजपूताना शासनकाल के दौरान इस क्षेत्र में शाही परिवारों की महिलाएं सार्वजनिक जल कार्यों की देखरेख करती थीं, विशेष रूप से रानियाँ, जिन्होंने इन परियोजनाओं में भाग लिया और उनका नेतृत्व किया। इसी क्रम में, महाराजा अभय सिंह राठौड़ की पत्नी, मारवाड़ (जोधपुर) की महारानी तंवर (तूर रानी) ने इस परियोजना का नेतृत्व किया और इस तरह तूरजी का झालरा अस्तित्व में आया। इसका नाम इसकी संरक्षिका रानी तूर के नाम पर रखा गया।

वर्ष 1740 में जल आवश्यकता के कारण निर्मित इस बावड़ी ने न केवल क्षेत्र की सूखे की समस्या को संभालते हुए भूजल तक पहुँचने के लिए धरती की गहराई में प्रवेश किया बल्कि स्थानीय लोगों की विभिन्न जल आवश्यकताओं को भी पूर्ण किया। इस प्रकार, यह झालरा न केवल स्थानीय लोगों की जल आपूर्ति का स्थान बना, बल्कि यह ऐसा स्थान बन गया जहाँ दैनिक बातचीत और अनुष्ठान उतने ही सामान्य हो गए जितना स्वयं पानी। बावड़ी का उद्देश्य एक साधारण संरचना से बढ़कर, जोधपुर के हृदय का अभिन्न अंग बन गया और सदियों तक स्थानीय लोगों द्वारा इसका उपयोग किया गया, जब तक कि शहर का आधुनिकीकरण नहीं हुआ।

वास्तुकलाः

बावड़ी का डिज़ाइन, प्राचीन वास्तुकला के विशेषज्ञों के अद्वितीय कौशल को दर्शाता है, जो कि कलात्मकता और अभियांत्रिकी में पूर्णता का सम्मिश्रण है। इसका निर्माण जोधपुर के विशिष्ट गुलाबी लाल बलुआ पत्थर से किया गया है, जिसकी गहराई लगभग 200 फीट से अधिक है। तूरजी का झालरा, कई अन्य झालरों की तरह, पानी के उतार–चढ़ाव को समायोजित करने के लिए डिज़ाइन किया गया था। संरचना के निर्माण में विशेष रूप से इस बात का ध्यान रखा गया था कि यह पूरे साल स्थानीय जल आपूर्ति करता रहे एवं भूजल तक पहुँच प्रदान करता रहे। इसकी वास्तुकला में जल स्तर तक ले जाने वाली अलग–अलग और परिवर्तित सीढ़ियों की एक श्रृंखला शामिल की गई थी। इसमें पानी के दो प्रवेश स्तर और नीचे एक अलग टैंक है। बावड़ी में मूल रूप से एक फ़ारसी पहिया (पर्शियन व्हील) था, जिसे पानी खींचने के लिए शीर्ष मंच पर स्थापित किया गया था एवं जिसे बैलों की मदद से चलाया जाता था।

झालरे की दीवारों पर राजपूत वास्तुकला में, नाचते हुए हाथियों, मध्यकालीन शेरों और गायों की आकृतियों की नक्काशी की गई थी, तथा आलों में उस समय के पूज्य देवताओं की मूर्तियाँ रखी गई थीं। जल की निकासी के लिए गाय और शेर के आकार के जलकुंडों का निर्माण किया गया था। अधिकांश सीढ़ियों के नीचे छोटे कक्ष/अलमारियाँ हैं, जिनका उपयोग संभवतः रात के समय ऊपर–नीचे चढ़ने–उतरने में सहायता के लिए लालटेन रखने या आग जलाने के लिए किया जाता था। सबसे ऊपरी स्तर पर पारंपरिक छतरी शैली में एक आंगन है। बावड़ी के दो स्तरों में उभरे हुए झरोखे और एक गलियारा भी है, जहाँ से झालरे का अच्छा नज़ारा देखा जा सकता है।

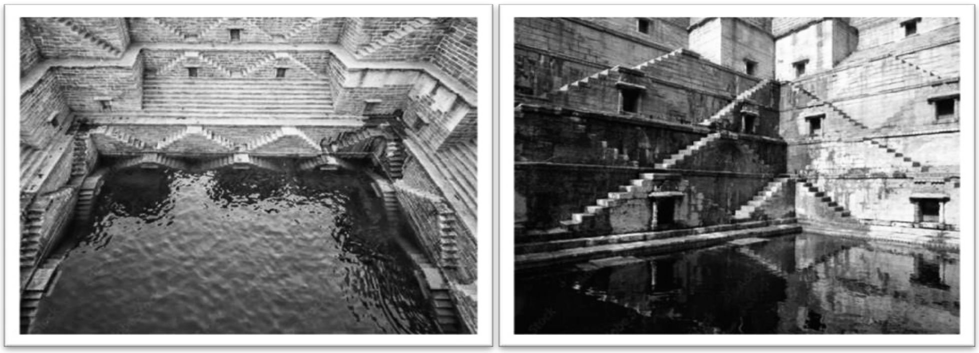

चित्र 2: तूरजी के झालरा की नायाब वास्तुकला के परिदृश्य

प्रारंभिक खोज, ऐतिहासिक सिद्धांत और विश्लेषणः

अपनी प्राचीन विरासत के बावजूद, तूरजी का झालरा सदियों तक गुमनामी के अंधेरे में डूबा रहा। टनों मलबे और गाद के तले छिपे इस भव्य और ऐतिहासिक धरोहर के उजागर होने का

मानो सब इंतजार कर रहे थे। एक सदी से भी अधिक समय तक जलमग्न रहने के बाद, हाल की शहरी विकास परिषदों, इतिहासकारों और स्थानीय अधिकारियों, द्वारा शहरी पुनरुत्थान योजना के सहयोग से RAAS संस्था के अथक प्रयासों ने बावड़ी को एक महत्वपूर्ण पुरातात्विक स्थल के रूप में फिर से उभरने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। खुदाई के दौरान, जब मजदूरों ने पहली बार सतह के नीचे की पत्थर की संरचना को पाया, तो स्थानीय लोगों और इतिहासकारों के बीच उत्सुकता जाग उठी। लोग उस कलाकृति को देखने के लिए उमड़ पड़े जो उन्हें उनके पैतृक अतीत से जोड़ती थी। इसे सिर्फ एक खोज नहीं, बल्कि जोधपुर की समृद्ध सांस्कृतिक धरोहर के एक अमूल्य अंश के साथ पुनर्मिलन के रूप में देखा गया।

तूरजी के झालरे के प्राचीन काल का निर्धारण इतिहासकारों और पुरातत्वविदों के लिए एक महत्वपूर्ण प्रयास रहा है। स्ट्रैटिग्राफी और शिलालेखों के अध्ययन जैसी उन्नत तकनीकों के माध्यम से, विशेषज्ञों ने इसकी उत्पत्ति 18वीं शताब्दी में होने का अनुमान लगाया है। इसके पत्थरों के काम की सटीकता और रूपांकनों की शैली इसे उस समय की स्थापित वास्तुशिल्प प्रथाओं से जोड़ती है, जो रेगिस्तानी परिदृश्य में जल के संरक्षण के लिए उपयोग की जाने वाली पद्धतियों की जानकारी प्रदान करती है।

इसके निर्माण को लेकर, शाही संरक्षण से लेकर सामुदायिक प्रयासों तक के कई सिद्धांत हैं, जो इसके भव्य पैमाने और शासक वर्ग की भागीदारी को दर्शाते हैं। फिर भी, लिखित अभिलेखों की कमी व्याख्या के लिए स्थान छोड़ देती है। कुछ विद्वान इसके अभिविन्यास और संरचना के लिए एक गहरे, ब्रह्माण्ड संबंधी महत्व का सिद्धांत देते हैं, जो इसके निर्माताओं द्वारा प्राकृतिक दुनिया की उन्नत समझ का संकेत देता है।

विशेषज्ञों के अनुसार, झालरे का डिज़ाइन प्रतीकात्मकता से परिपूर्ण है, जो ऐतिहासिक अनुमानों और सिद्ध तथ्यों का मिश्रण है। इसकी स्तरित सीढ़ियाँ जीवन की यात्रा का प्रतिनिधित्व करती हैं, जबकि जल पवित्रता और जीवन के स्रोत को दर्शाता है। यहां किए जाने वाले अनुष्ठानों के कई आयाम थे, जिनमें जल देवताओं की पूजा भी शामिल है, जो स्थानीय संस्कृति में गहराई से अंतर्निहित है।

जल प्रबंधन प्रणालीः

शहर के प्राचीन योजनाकारों ने जल वास्तुकला एवं प्रबंधन प्रणाली की एक अनूठी अवधारणा पेश की जो शहर की भौगोलिक परिस्थितियों पर आधारित थी। एक ओर, जहां मेहरानगढ़ का विशाल किला पहाड़ी की चोटी पर स्थित था, वहीं मुख्य शहर इसके तल पर स्थित था। इस प्रकार, गुरुत्वाकर्षण–आधारित जल वितरण प्रणाली के माध्यम से शहर की जल आपूर्ति को पूर्ण किया जाता था। इसके लिए शहर के चारों ओर स्थित पहाड़ियों में झीलों और नहरों के एक विशाल तंत्र का निर्माण कराया गया, जबकि मैदानी इलाकों में कुएं, झालरों और टांकों का निर्माण कराया गया। इससे ऊपर की ओर स्थित झीलों में संग्रहित वर्षा जल एक्वाडक्ट्स अथवा भूमिगत चैनलों के माध्यम से रिसकर कुओं और झालरों को पुनःपूरित करता था। शहर के केंद्र से लगभग 10 किमी ऊपर स्थित कायलाना झील इस उद्देश्य के लिए सबसे बड़ी जल स्रोत थी।

सांस्कृतिक महत्व, संरक्षण एवं वर्तमान प्रासंगिकताः

तूरजी का झालरा न केवल अपनी अद्वितीय स्थापत्य कला के लिए प्रसिद्ध है, बल्कि सामुदायिक गौरव का प्रतीक और स्थानीय लोगों के सामाजिक जीवन का केंद्र बिंदु भी था। यहाँ विभिन्न समुदायों के लोग एकत्र होकर आपस में बातचीत करते, कहानियाँ साझा करते और सांस्कृतिक संबंध मजबूत करते थे। इस प्रकार, स्थान की आध्यात्मिक महत्ता और दैनिक उपयोगिता

ने इसे एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक स्थल का दर्जा दिया। साथ ही त्योहारों और स्थानीय कहानियों ने इसके ऐतिहासिक महत्व को और भी समृद्ध किया है।

आज, तूरजी का झालरा एक ऐतिहासिक स्मारक से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। यह स्थिरता और पारंपरिक ज्ञान का एक प्रतीक है। झालरा/बावड़ी के जीर्णोद्धार और रखरखाव के प्रयास यह सुनिश्चित करते हैं कि इसकी विरासत कायम रहे, जिससे नई पीढ़ियों को इसकी व्यावहारिक सुंदरता और ऐतिहासिक महत्व की सराहना करने का मौका मिले। यह सिर्फ अतीत का अवशेष ही नहीं बल्कि प्रेरणा का एक निरंतर स्रोत है, जो हमें स्थायी प्रथाओं और सामुदायिक भावना की याद दिलाता है जिसे हम अपनी आधुनिक दुनिया में पुनर्जीवित करने का प्रयास करते हैं।

निष्कर्ष:

तूरजी का झालरा का व्यापक अन्वेषण न केवल इसकी वास्तुकला की भव्यता को उजागर करता है, बल्कि इसकी गहन सांस्कृतिक महत्ता को भी प्रकट करता है। यह झालरा (स्टेपवेल) जल संकट का समाधान करने के लिए अतीत में विकसित की गई कुशल योजनाओं का प्रतीक है और यह संदेश देता है कि जीवन और संस्कृति को बनाए रखने में जल की महत्वपूर्ण भूमिका क्या होती है। इस संरचना का सामुदायिक पहलू इसके उपयोग और परंपराओं में परिलक्षित होता है, जो मानव समुदायों और उनके प्राकृतिक पर्यावरण के बीच आंतरिक संबंध को रेखांकित करता है।

जन-जन को जो
मिलाती है, वो भाषा
हिंदी कहलाती है।
क
ख
ग
SmitCreation.com